

बोलिन चेटिया

बनाम

जगदीश भुवन और अन्य

11 मार्च, 2005

[आर. सी. लाहोटी, सीजे और जी. पी. माथुर, जे.]

लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951- धारा 116 ए- प्रवेश स्तर पर अपील को संक्षिप्त रूप से खारिज करने के लिए सर्वोच्च न्यायालय की शक्ति के तहत अपील -अभिनिर्धारित- यद्यपि अधिनियम की धारा 116 ए के तहत अपील को अधिकार के रूप में प्राथमिकता दी जाती है, फिर भी प्रवेश स्तर पर अपील को संक्षिप्त रूप से खारिज करने की सर्वोच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति को हटा नहीं लिया जाता है- लेकिन ऐसी शक्ति का उपयोग केवल अपवाद के रूप में किया जाएगा, जैसे कि न्यायालय को यह विश्वास हो कि अपील तथ्य या कानून का कोई ऐसा प्रश्न नहीं उठाती है जो इस न्यायालय को सुनवाई से पूर्व प्रतिवादी को नोटिस जारी के लिए प्रेरित करती हो।

उच्चतम न्यायालय नियम, 1966- आदेश XV, नियम 5A- नियम 5A को आदेश XV के भाग II में जोड़ा गया है जो उच्च न्यायालय द्वारा प्रमाण पत्र पर अपीलों से संबंधित है।- इसकी व्याख्या उच्चतम न्यायालय

के समक्ष दायर सभी प्रकार की वैधानिक अपीलों के निपटारे के रूप में नहीं की जा सकती है- भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 145।

शब्द और वाक्यांश-"अपील"-का अर्थ

अपीलार्थी असम राज्य में विधानसभा चुनावों में उम्मीदवार थे। वे चुनाव हार गए। उनकी चुनाव याचिका को उच्च न्यायालय ने खारिज कर दिया था।

उन्होंने धारा 116ए, लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 के तहत वर्तमान अपील दायर की है। जब इस न्यायालय के समक्ष अपील रखी गई, तो यह महसूस किया गया कि क्या अपीलार्थी को अपील के स्वीकारने के प्रश्न पर सुना जा सकता है, यानी कि क्या अपील द्वि-पक्षीय सुनवाई के लिए स्वीकार किए जाने के योग्य है। अपीलार्थी ने न्यायालय के इस कदम का विरोध करते हुए कहा कि यह अपील एक सांविधिक प्रथम अपील होने के कारण, इसे अधिकार के रूप में द्वि-पक्षीय सुनवाई के लिए स्वीकार किया जाना चाहिए और प्रत्यर्थियों को एक नोटिस निश्चित रूप से जारी किया जाना चाहिए। अपीलार्थी आगे कहा कि प्रवेश पर सुनवाई के उद्देश्य से अदालत के समक्ष अपील को सूचीबद्ध करने की आवश्यकता नहीं है; बल्कि रजिस्ट्री को स्वयं ही उत्तरदाताओं को नोटिस जारी करने का निर्देश दिया जाना चाहिए था और और केवल कागजी किताबों के मुद्रण,

दस्तावेजों की फाइलिंग आदि के मामले में निर्देशों की मांग करने के लिए अपील को रखा जाना चाहिए था।

अपीलार्थी के तर्कों को अस्वीकार करते हुए और अपील को प्रारंभिक सुनवाई के लिए रखा जाने हेतु निर्देशित करते हुए (अर्थात् प्रवेश पर सुनवाई),

न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया:

1. हालांकि अधिनियम की धारा 116ए के तहत एक अपील को अधिकार के रूप में वरीयता दी जाती है, फिर भी प्रवेश के स्तर पर अपील को संक्षिप्त रूप से खारिज करने की इस न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति को दूर नहीं किया जाता है। ऐसी शक्ति का प्रयोग केवल अपवाद के रूप में किया जाएगा, जैसे कि न्यायालय को यह विश्वास हो कि अपील तथ्य या कानून का कोई ऐसा प्रश्न नहीं उठाती है जो इस न्यायालय को सुनवाई से पूर्व प्रतिवादी को नोटिस जारी के लिए प्रेरित करती हो। ।

2. लोक प्रतिनिधि अधिनियम की धारा 116A और 116C को सादा पढ़ने से पता चलता है कि धारा 98 या धारा 99 के तहत किसी भी उच्च न्यायालय द्वारा पारित किये गए प्रत्येक आदेश के विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालय में अपील की जा सकती है। कानून और तथ्य, दोनों के किसी भी सवाल पर सुनवाई की जाती है। उच्च न्यायालय द्वारा अपने मूल नागरिक अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए पारित किसी भी अंतिम आदेश के

खिलाफ पहली अपील पर लागू प्रक्रिया के अनुसार, हर ऐसी अपील की "सुनवाई और निर्धारण" किया जाएगा। सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधान, विसंगति के मामले में, अधिनियम और उसके तहत बनाए गए नियमों में निहित प्रावधानों को मार्गदर्शन देने का पथ प्रदान करेंगे। ऐसी अपीलों के संबंध में उच्चतम न्यायालय के नियम अतिरिक्त रूप से लागू होते हैं।

3. सर्वोच्च न्यायालय के नियम, 1966 जो संविधान के अनुच्छेद 145 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए बनाये गये हैं, ऐसी अपीलों के लिए लागू प्रक्रिया का प्रावधान नहीं करते हैं। यदि केवल नियमों को अधिनियम की धारा 116 ए के तहत अपील की सुनवाई के लिए नियमित किया गया होता, तो न्यायालय प्रत्यर्थियों को एकतरफा सुनवाई के बिना रजिस्ट्री द्वारा अपील के प्रस्तावना की सूचना जारी करने या प्रारंभिक सुनवाई के लिए अपील को प्रस्तुत करने के लिए विशेष प्रावधान कर सकता था।

4. नियम 5 ए यहाँ लागू नहीं होता है क्योंकि इसका उल्लेख भाग 2, आदेश XV में मिलता है जो कि उच्च न्यायालय द्वारा प्रमाण पत्र पर अपीलों के नियमों से सम्बन्धित है। नियम 5 ए की व्याख्या इस न्यायालय के समक्ष दायर सभी प्रकार की वैधानिक अपीलों से निपटने के रूप में नहीं की जा सकती है। इसके विपरीत, वैधानिक अपीलों से संबंधित उच्चतम न्यायालय के नियमों में निहित प्रावधान अलग हैं।

मेसर्स गोलचा इन्वेस्टमेंट (पी) लिमिटेड बनाम शांति चंद्र बाफना, [1970] 3 एस. सी. सी 65, का फैसला विभेदित किया गया ।

5.1. 'अपील' शब्द लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम या सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 में परिभाषित नहीं है। अपने स्वाभाविक और सामान्य अर्थ में एक अपील एक ऐसा उपचार है जिसके द्वारा एक निम्न मंच द्वारा निर्धारित एक हेतुक एक वरिष्ठ मंच के समक्ष निम्न मंच द्वारा दिए गए निर्णय की शुद्धता का परीक्षण करने के उद्देश्य से प्रस्तुत किया जाता है।

5.2. अपील का अधिकार किसी अपीलार्थी का, जो किसी विवादित निर्णय से व्यथित है, एक मौलिक और मूल्यवान अधिकार है। संहिता के आदेश 41 के नियम 11 के उप-नियम (1) के अनुसार, अपीलीय न्यायालय, अभिलेख भेजने के बाद, यदि वह ऐसा करना उचित समझता है और अपीलार्थी की सुनवाई के लिए एक दिन निर्धारित करने के बाद, उस अदालत को नोटिस भेजे बिना और प्रतिवादी को नोटिस दिए बिना अपील को खारिज कर सकता है जिसकी डिक्री से अपील की जाती है । यद्यपि न्यायालय सुनवाई की ऐसी तिथि पर आयोजित कार्यवाही या अपील की सुनवाई की प्रक्रिया में इस तरह के कदम को कोई विशेष नाम नहीं देता है, न्यायिक वर्ग में, इसे आम तौर पर 'प्रस्ताव सुनवाई' या 'प्रवेश पर सुनवाई' या 'प्रारंभिक सुनवाई' कहा जाता है। एक अपील केवल कानून का प्रश्न उठा सकती है और अपीलीय न्यायालय प्रारंभिक सुनवाई में एक राय

बना सकता है कि क्या अपील निचली अदालत के रिकॉर्ड के आह्वान किये बिना कानून के उस प्रश्न पर दो-पक्षीय सुनवाई के योग्य है।

6. उच्च न्यायालय सहित अपीलीय न्यायालयों के पास एक अपील को संक्षेप में खारिज कर देने की शक्ति है। ऐसी शक्ति अपीलीय अधिकार क्षेत्र में निहित है। पहली अपीलों के संबंध में इस सावधानी के अधीन कि ऐसी शक्ति का प्रयोग अपवाद के रूप में किया जाएगा और यदि केवल पहली अपीलीय अदालत को विश्वास हो जाता है कि अपील इतनी बेकार है, तथ्य या कानून का कोई तर्क योग्य सवाल नहीं उठाता है, क्योंकि यह प्रतिवादी को पेश होने के लिए बुलाए जाने के लिए समय और धन की सरासर बर्बादी होगी, और न्यायालय के लिए एक व्यर्थ अभ्यास भी होगा तो ऐसी अपील को संक्षेप में खारिज करने की शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है। अपीलों को संक्षिप्त रूप से खारिज करने की शक्ति का प्रयोग करने वाले पहले अपीलीय न्यायालय को एक स्पष्ट आदेश पारित करना चाहिए जो कि इसे तथ्य और/या कानून की दलीलों से सटीक बनाता हो । जो कि विचार करने के बाद और संक्षिप्त कारण दिए जाने के बाद किसी भी योग्यता या सार के विहीन पाया गया हो । यह किसी भी उच्चतर क्षेत्राधिकार को संतुष्ट करने के लिए आवश्यक है, जिसके लिए पीड़ित अपीलार्थी इस बात से संपर्क कर सकता है, कि अपील को संक्षिप्त रूप से खारिज करने की शक्ति का प्रयोग एक अपवाद के माध्यम से न्यायिक और सचेत रूप से किया गया था। यह अभ्यास का नियम सर्वोच्च न्यायालय के

लिए लागू नहीं होता क्योंकि यह अंतिम न्यायालय है और इस न्यायालय के निर्णयों के खिलाफ कोई अपील दाखिल नहीं होती है, जिसमें सम्मिलित अपील को संक्षेप में खारिज किया गया हो।

उमाकांत विष्णु जुनानारकर बनाम प्रमीलाबाई और अन्य, (1973) 1 एससीसी 152; महादेव तुकाराम वेटाले और अन्य बनाम श्रीमती सुगंधा और अन्य, (1973) 3 एस.सी.सी. 746 और किरणमाल जुमेरलाल बोराना मारवाड़ी बनाम जानोबा बाजीराव खोट और अन्य, (1983) 4 एस.सी.सी. 223, पर भरोसा किया।

एस पी खन्ना बनाम एस. एन. घोष, (1976) टेक्स. एल. आर. 1740, अनुमोदित।

शहरुल्ला मंडल बनाम बांगू मंडल और अन्य, 13 सी. डब्ल्यू. एन. 143 और जगदीश चंद्र दास बनाम चंद्र मोहन दास, एआईआर (1920) पटना 509, संदर्भित किया।

7.1. पहली अपील को संक्षेप में खारिज करने की शक्ति, यद्यपि अपील सांविधिक हो और अधिकार के रूप में दाखिल की गई हो, इसे आपातकालीन मानना चाहिए और इसलिए इस न्यायालय में इसकी स्वाभाविकता और आवश्यकता के रूप में निहित है।

सीता राम और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (1979)2 एससीसी 656, विस्तार से समझाया।

भारत संघ और अन्य बनाम रघुबीर सिंह (मृत) जरिये विधिक प्रतिनिधि आदि, (1989)2 एस.सी.सी. 754, पर भरोसा किया।

7.2. सामान्यतः साक्ष्य विशेषकर मौखिक के मूल्यांकन, करके निकाले गए निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं किया जाता, हालांकि निचली अदालत के गलत दृष्टिकोण या किए गए अन्याय से संतुष्ट होने पर, इस न्यायालय के पास न केवल शक्ति होगी, बल्कि गलती को सुधारने और हटाने का दायित्व भी होगा।

सुरिंदर सिंह बनाम हरदियाल सिंह और अन्य, (1985)1 एससीसी 91, संदर्भित किया ।

सिविल अपील की क्षेत्राधिकार: सिविल अपील सं. 7376/2003

उच्च न्यायालय गुवाहाटी, असम के चुनाव याचिका सं. 9/2001 में पारित निर्णय एवं आदेश दिनांक 15.7.2003 से

अपीलार्थी की ओर से:- सुशील कुमार जैन, ए. पी. धमीजा, प्रदीप अग्रवाल, पुनीत जैन, एच. डी. थानवी और एल. पी. सिंह।

प्रत्यर्थीगण की ओर से:- प्रज्ञान पी. शर्मा और डॉ. कैलाश चंद ।

न्यायालय द्वारा निम्नलिखित आदेश पारित किया गया :

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति आर. सी. लाहोटी, सीजे द्वारा दिया गया ।



धारा 116 ए लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 के तहत एक अपील में केवल दाखिल किए जाने पर, क्या प्रत्यर्थी को अनिवार्य रूप से और नियमित रूप से नोटिस पर रखा जाना चाहिए, उस स्तर पर न्यायिक दिमाग के आवेदन को अपील के गुणागुण के लिए छोड़ दिया जाना चाहिए? क्या इस न्यायालय के पास अपील को संक्षेप में खारिज करने की शक्ति नहीं है, चाहे वह कितनी भी बेकार क्यों न हो? ये वे प्रश्न हैं जो निर्णय के लिए उत्पन्न हुए हैं; अपीलार्थी के विद्वान वकील द्वारा जोरदार तरीके से प्रस्तुत किए जाने के लिए धन्यवाद।

अपीलार्थी असम राज्य में विधान सभा चुनाव में एक उम्मीदवार था। वह चुनाव में हार गए, साथ ही उच्च न्यायालय में भी, जहां उनके द्वारा एक चुनाव याचिका प्रचारित उम्मीदवार के चुनाव को मुद्दा बनाते हुए दायर की गई, जहाँ मुकदमे पर खारिज करने का निर्देश दिया गया। उन्होंने लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 (इसके बाद 'अधिनियम', संक्षेप में) की धारा 116 ए के तहत वर्तमान अपील प्रस्तुत की है ।

जब अदालत के समक्ष अपील की गई, तो हम प्रवेश के प्रश्न पर अपीलार्थी के विद्वान वकील सुनना चाहते थे कि क्या अपील दो-पक्षीय सुनवाई के लिए स्वीकार किए जाने के योग्य है। अपीलार्थी के विद्वान वकील ने न्यायालय के कदम का विरोध किया और प्रस्तुत किया कि यह अपील एक वैधानिक पहली अपील है और इसलिए, इसे इसके लिए

अधिकार के रूप में दो-पक्षीय सुनवाई हेतु स्वीकार किया जाना चाहिए और उत्तरदाताओं को एक नोटिस निश्चित रूप से जारी किया जाना चाहिए। वास्तव में, अपीलार्थी के विद्वान वकील ने इस हद तक तर्क दिया कि अपील को प्रवेश पर सुनवाई के उद्देश्य से न्यायालय के समक्ष सूचीबद्ध करने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि रजिस्ट्री को स्वयं ही उत्तरदाताओं को नोटिस जारी करने का निर्देश दिया जाना चाहिए था और और केवल कागजी किताबों के मुद्रण, दस्तावेजों की फाइलिंग आदि के मामले में निर्देशों की मांग करने के लिए अपील को रखा जाना चाहिए था। दूसरे शब्दों में, अपीलार्थी के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि इस स्तर पर न्यायालय केवल वही निर्देश दे सकता है जो अंतिम सुनवाई को सक्षम करने के लिए रिकॉर्ड तैयार करने के लिए आवश्यक हो सकते हैं और अपील को स्वीकार करने के लिए किसी आदेश की आवश्यकता नहीं है।

हमने अपीलार्थी के लिए विद्वान वकील को सुना है, साथ ही कैविएट पर उपस्थित प्रतिवादी (सफल उम्मीदवार) के लिए विद्वान वकील को भी सुना ।

अधिनियम में निहित प्रासंगिक वैधानिक प्रावधान इस प्रकार हैं:

“116 ए. उच्चतम न्यायालय में अपील- (1) तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी किसी उच्च न्यायालय द्वारा धारा 98 या धारा 99 के अधीन

किए गए हर आदेश से किसी भी प्रश्न पर (चाहे वह विधि का हो या तथ्य का) अपील उच्चतम न्यायालय में होगी:

(2) इस अध्याय के अधीन हर अपील उच्च न्यायालय के धारा 98 या धारा 99 के अधीन के आदेश की तारीख से तीस दिन की कालावधि के भीतर की जाएगी:

परन्तु यदि उच्चतम न्यायालय का समाधान हो जाता है कि ऐसी कालावधि के भीतर अपील प्रस्तुत न करने के लिए अपीलार्थी के पास पर्याप्त हेतुक था तो वह तीस दिन की उक्त कालावधि के अवसान के पश्चात् अपील ग्रहण कर सकेगा।

116 सी. अपील में प्रक्रिया-(1) इस अधिनियम के और तद्वीन बनाए गए नियमों के यदि कोई हो, उपबन्धों के अध्यधीन रहते हुए हर अपील उच्चतम न्यायालय द्वारा उस प्रक्रिया के यथाशक्य निकटतम अनुसार सुनी और अवधारित की जाएगी जो ऐसी अपील की सुनवाई और अवधारण को लागू होती है जो उच्च न्यायालय द्वारा उसकी मूल सिविल अधिकारिता के प्रयोग में पारित किसी अन्तिम आदेश से की जाए और सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) के और उस न्यायालय के नियमों के सभी उपबन्ध (जिनके

अन्तर्गत प्रतिभूति देने और न्यायालय के किसी आदेश के निष्पादन से सम्बद्ध उपबन्ध आते हैं) ऐसी अपील के संबंध में यावत्शक्य लागू होंगे।

XXX                      XXX                      XXX                      XXX"

उपरोक्त प्रावधानों को सादे रूप से पढ़ने से पता चलता है कि धारा 98 या धारा 99 के तहत उच्च न्यायालय द्वारा पारित प्रत्येक आदेश के खिलाफ सर्वोच्च न्यायालय में अपील की जाएगी। कानून और तथ्य, दोनों के किसी भी सवाल पर सुनवाई की जाती है। उच्च न्यायालय द्वारा अपने मूल नागरिक अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए पारित किसी भी अंतिम आदेश के खिलाफ पहली अपील पर लागू प्रक्रिया के अनुसार, हर ऐसी अपील की "सुनवाई और निर्धारण" किया जाएगा। सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधान, विसंगति के मामले में, अधिनियम और उसके तहत बनाए गए नियमों में निहित प्रावधानों को मार्गदर्शन देने का पथ प्रदान करेंगे। ऐसी अपीलों के संबंध में उच्चतम न्यायालय के नियम अतिरिक्त रूप से लागू होते हैं।

सर्वोच्च न्यायालय के नियम, 1966 जो संविधान के अनुच्छेद 145 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए बनाये गये हैं, ऐसी अपीलों के लिए लागू प्रक्रिया का प्रावधान नहीं करते हैं। बी. आर. अग्रवाल द्वारा लिखित

एक पुस्तक 'सुप्रीम कोर्ट प्रैक्टिस एंड प्रोसीजर' में, हम निम्नलिखित अंश (पृष्ठ 138 पर) पाते हैं:-

“उच्चतम न्यायालय द्वारा लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 के तहत अपील दायर करने और सुनवाई करने के कोई अलग नियम नहीं बनाए गए हैं । चुनाव अपीलों में प्रक्रिया वैसी ही होगी जैसी कि दीवानी अपीलों के मामलों में होती है।

जैसे ही चुनाव अपील दायर की जाती है, उन्हें क्रमांकित किया जाता है और प्रारंभिक निर्देशों के लिए न्यायालय के समक्ष रखा गया। चुनाव अपीलों आम तौर पर त्वरित अपीलों के रूप में माना जाता है। सामान्यतः यह निर्देश दिए जाते हैं कि जैसे ही अभिलेख तैयार हो, अपीलों सुनवाई के लिए न्यायालय के समक्ष रखी जानी चाहिए । बाकी प्रक्रिया अन्य सामान्य अपीलों के समान ही है। अपील की एक याचिका पर 250 रुपये का न्याय-शुल्क देना होता है” ।

रजिस्ट्री ने हमारे ध्यान में यह भी लाया है कि अधिनियम की धारा 116 ए को शामिल करते हुए सभी वैधानिक अपीलों को न्यायालय के समक्ष सुनवाई के लिए रखा जाता है, जब तक कि नियमों द्वारा अन्यथा विशेष रूप से व्यवस्था नहीं की गई हो। यह भी बताया गया है कि अतीत में ऐसे

कई मामले सामने आए हैं जहां इस तरह की अपीलों को स्वीकार नहीं किए जाने और उत्तरदाताओं को ध्यान में रखे बिना खारिज कर दिया गया है।

'अपील' शब्द अधिनियम या सिविल प्रक्रिया, 1908 संहिता (इसके बाद संक्षेप में 'संहिता') में परिभाषित नहीं पाया गया है। अपने स्वाभाविक और सामान्य अर्थ में एक अपील एक ऐसा उपचार है जिसके द्वारा एक निम्न मंच द्वारा निर्धारित एक हेतुक एक वरिष्ठ मंच के समक्ष निम्न मंच द्वारा दिए गए निर्णय की शुद्धता का परीक्षण करने के उद्देश्य से प्रस्तुत किया जाता है। अपील का अधिकार किसी अपीलार्थी का, जो किसी विवादित निर्णय से व्यथित है, एक मौलिक और मूल्यवान अधिकार है। संहिता के आदेश 41 के नियम 11 के उप-नियम (1) के अनुसार, अपीलीय न्यायालय, अभिलेख भेजने के बाद, यदि वह ऐसा करना उचित समझता है और अपीलार्थी की सुनवाई के लिए एक दिन निर्धारित करने के बाद, उस अदालत को नोटिस भेजे बिना और प्रतिवादी को नोटिस दिए बिना अपील को खारिज कर सकता है जिसकी डिक्री से अपील की जाती है। यद्यपि न्यायालय सुनवाई की ऐसी तिथि पर आयोजित कार्यवाही या अपील की सुनवाई की प्रक्रिया में इस तरह के कदम को कोई विशेष नाम नहीं देता है, न्यायिक वर्ग में, इसे आम तौर पर 'प्रस्ताव सुनवाई' या 'प्रवेश पर सुनवाई' या 'प्रारंभिक सुनवाई' कहा जाता है। एक अपील केवल कानून का प्रश्न उठा सकती है और अपीलीय न्यायालय प्रारंभिक सुनवाई में एक राय बना सकता है कि क्या अपील निचली अदालत के रिकॉर्ड के आह्वान किये

बिना कानून के उस प्रश्न पर दो-पक्षीय सुनवाई के योग्य है। सामान्यतः अपील अदालत, और विशेष रूप से प्रथम अपील अदालत, निचली अदालत के रिकॉर्ड को अपने समक्ष देखना पसंद करती है। लेकिन यह हमेशा आवश्यक नहीं है। एक अपील केवल कानून का प्रश्न उठा सकती है और अपीलीय न्यायालय प्रारंभिक सुनवाई में एक राय बना सकता है कि क्या अपील निचली अदालत के रिकॉर्ड के आह्वान किये बिना कानून के उस प्रश्न पर दो-पक्षीय सुनवाई के योग्य है। सामान्यतः प्रथम अपील पर कानून और तथ्य दोनों के प्रश्नों पर सुनवाई की जाती है तथा अपीलीय न्यायालय के पास ऐसे सभी आदेश देने की शक्ति है जो मूल न्यायालय कर सकता है। अपीलीय अदालत को दिया गया विवेक जिसके आधार पर अपील को अपनी सीमा पर खारिज करने की अधिकार है, वह न्यायिक विवेक है और इसे अनियंत्रित या इच्छाशक्ति द्वारा नहीं बढ़ाया जा सकता। अपीलीय अदालतें संक्षेप में खारिज करने के पक्ष में विवेक का प्रयोग केवल विशेष परिस्थितियों में ही करती हैं और यह कहने सही नहीं है कि अपीलीय अदालत के पास अपील को संक्षेप में और सीमा पर खारिज करने की शक्ति नहीं है। ऐसी संक्षेप में खारिज करने की शक्ति, किसी विशेष मामले की तथ्य और परिस्थितियों पर निर्भर करती है, उत्तरदाता को नोटिस जारी करने से पहले और न्यूनतम मंडल के रिकॉर्ड को भेजने से पहले भी इस्तेमाल की जा सकती है। उसी तरह, अपीलीय अदालत को पूरे में अपील को स्वीकार या खारिज करने की शक्ति होती है, और साथ ही,

अगर दो भाग अलग किए जा सकते हैं, तो विशेष दिनांक के सम्बंध में अपील को भाग में स्वीकृत और भाग में खारिज किया जा सकता है। एक बार जैसे ही अपील स्वीकार होती है, अपीलीय अदालत को, बहुत ही असाधारण मामलों को छोड़कर, उन सभी मुद्दों को जिन पर अपील सुनी जानी चाहिए, सीमित नहीं करना चाहिए। जब अपीलीय अदालत अपील को उत्तरदाता को नोटिस जारी किए बिना खारिज करने के पक्ष में अपने विवेक का प्रयोग करती है, उम्मीद की जाती है कि इसके पीछे कारण रिकॉर्ड पर रखे जाएं। ऐसी कार्रवाई के आदेश को उच्चतर मंडल के सामने चुनौती देने के लिए खुला होता है, इसलिए ऐसे कार्रवाई के लिए कार्यान्वयन का नियम बनाया जाता है। यह अभ्यास का नियम सर्वोच्च न्यायालय के लिए लागू नहीं होता क्योंकि यह अंतिम न्यायालय है और इस न्यायालय के निर्णयों के खिलाफ कोई अपील दाखिल नहीं होती है, जिसमें सम्मिलित अपील को संक्षेप में खारिज किया गया हो:

हस्तगत प्रकरण से सम्बन्धित मामले में न्यायिक राय देने हेतु कुछ तय किए गए मामलों का संदर्भ देना उपयोगी होगा।

उमाकांत विष्णु जुनानारकर बनाम प्रमीलाबाई और अन्य, (1973) 1 एससीसी 152, प्रथम अपीलीय न्यायालय की अपील को संक्षेप में खारिज करने की शक्ति से संबंधित, सुप्रीम कोर्ट ने महादेव तुकाराम वेटाले और अन्य बनाम श्रीमती सुगंधा और अन्य, (1973) 3 एस.सी.सी. 746 में



अपने पूर्व दृष्टिकोण को दोहराया और यह निर्णय लिया कि जो अपील याचना करती है, उसमें विवादित मुद्दे उठाए जाने चाहिए और उसे संक्षेप में नहीं खारिज किया जाना चाहिए। फिर भी, ऐसी शक्ति की उपलब्धता से इनकार नहीं किया गया था। न्यायालय ने इस प्रश्न को नोट किया-क्या किसी भी परिस्थिति में, कोई उच्च न्यायालय बिना कारण बताए प्रथम अपील को संक्षिप्त रूप से खारिज कर सकता है, और कहा कि उस मामले की विशेष परिस्थितियों में, ऐसे बड़े प्रश्न पर विचार करना आवश्यक नहीं था। शहरुल्ला मंडल बनाम बांगू मंडल और अन्य, 13 सी. डब्ल्यू. एन. 143 में डिवीजन बेंच ने किसी अपील को सरसरी तौर पर खारिज करते समय कारण बताने की आवश्यकता पर जोर दिया। कोई अपीलीय न्यायालय जो किसी अपील को सरसरी तौर पर खारिज कर रही है, वह मामले के तथ्यों पर एक स्वतंत्र निर्णय लेने और अपने फैसले में अपनी जांच के परिणाम को व्यक्त करने (चाहे वह कितना भी संक्षिप्त हो) के लिए बाध्य है।

जगदीश चंद्र दास बनाम चंद्र मोहन दास, एआईआर (1920) पटना 509, के मामले में डिवीजन बेंच एक लेटर पेटेंट अपील पर विचार कर रही थी। न्यायालय के नियमों ने रजिस्ट्रार के लिए एक प्रावधान किया कि वह खुद को संतुष्ट करे कि अपील समय के भीतर थी, पर्याप्त रूप से स्टाम्प लगी थी और नियमों का पालन किया गया था, और यदि ऐसा है, तो प्रथम अपील स्वीकार करें और प्रतिवादी को नोटिस जारी करें और उस पीठ

के पटल पर अपील प्रस्तुत करें जिसे ऐसी अपीलें सौंपी गई थीं। फिर भी, न्यायालय ने प्रतिवादी को नोटिस जारी करने के लिए कोई मामला बनाए जाने पर, प्रतिवादी को नोटिस दिए बिना, अपीलकर्ता या उसके वकील को बुलाने की पीठ की शक्ति को मान्यता दी। यह निर्णय लिया गया था कि अदालत उत्तरदाता को बुलाए बिना लेटर पेटेंट अपील को खारिज कर सकती है, जैसा कि आदेश XVI नियम 11 के तहत मामलों में निर्देश किया जाता है। यदि अपील स्वीकार की जाती है और न्यायालय, अपीलार्थी को सुनने के बाद, अपील का अंत में निपटान करने से पहले प्रतिवादी को सुनना चाहता है, तो वह ऐसा कर सकता है लेकिन यदि अपील खारिज कर दी जाती है, तो प्रतिवादी पर ध्यान देने और सुनने की आवश्यकता नहीं है।

एस पी खन्ना बनाम एस. एन. घोष, (1976) टेक्स. एल. आर. 1740, के मामले में कंपनी अधिनियम, 1956 की धारा 483 बॉम्बे उच्च न्यायालय की खंड पीठ के समक्ष विचार के लिए आई। धारा 483 में यह प्रावधान किया गया है कि न्यायालय द्वारा किसी कंपनी को बंद करने के मामले में किसी आदेश या निर्णय की अपील उसी न्यायालय में 'होगी' जिसमें, उसी तरीके से और उन्हीं शर्तों के अधीन, जिसके तहत, अपील न्यायालय के किसी भी आदेश या निर्णय से उसके सामान्य अधिकार क्षेत्र के भीतर मामलों में होती है। 'होगा' शब्द के उपयोग से यह स्पष्ट होता है कि अपील का अधिकार प्रावधान द्वारा प्रदत्त अधिकार के रूप में है। लेकिन, खंड पीठ ने कहा कि धारा 483 के तहत एक अपीलीय अदालत को

अपीलार्थी को प्रवेश स्तर पर गुण-दोष के आधार पर सुनने और यह तय करने का अधिकार है कि अपील में उठाए गए विवाद में कोई प्रथम दृष्टया सार है या नहीं। यह प्रावधान प्रारंभिक या प्रवेश स्तर पर बेकार की अपीलों को अस्वीकार करने की न्यायालय की शक्ति पर कोई बाधा नहीं डालता है और यह नहीं कहा जा सकता है कि केवल अपील की स्थापना उसके प्रवेश के समान होगी और उसे अंतिम सुनवाई के लिए जाना चाहिए। प्रावधान स्पष्ट रूप से एक उपचार के लिए प्रदान करता है और इसका उद्देश्य न्यायालय की शक्तियों के प्रयोग को सीमित या नियंत्रित करना नहीं है, और इसलिए, धारा 483 के तहत अपील को किसी भी अन्य दीवानी अपील की तरह माना और आगे बढ़ाया जाना चाहिए। अपील स्वीकार करने के चरण में किसी गैर-योग्य अपील को खारिज करने की अपीलीय अदालत की शक्ति, जो अंतिम सुनवाई के लिए उपयुक्त नहीं है, छीनी नहीं गई है।

बॉम्बे उच्च न्यायालय द्वारा मेसर्स गोलचा इन्वेस्टमेंट (पी) लिमिटेड बनाम शांति चंद्र बाफना, [1970] 3 एस. सी. सी 65 को संदर्भ दिया गया था, जिसमें जिसमें बॉम्बे उच्च न्यायालय के नियमों (नियम 965, 966, 966 ए) के अध्याय XLII की व्याख्या करते हुए, इस न्यायालय ने देखा है कि ऐसी अपीलें जिन्हें प्रवेश के लिए रखने की आवश्यकता नहीं है, स्वाभाविक रूप से प्रवेश पाने का हकदार हैं। इस फैसले की व्याख्या बॉम्बे हाई कोर्ट की डिवीजन बेंच ने की. हम एसपी खन्ना के मामले (उपरोक्त) में

बॉम्बे हाई कोर्ट के फैसले से निम्नलिखित अंशों को निकालने और पुनः पेश करने के इच्छुक हैं:

“ऐसी अपील और उसकी प्रक्रिया की संरचना में, प्रवेश की अवस्था, नोटिस जारी करने के बाद अंतिम सुनवाई की तरह, हमारे लिए स्वाभाविक दिखाई देती है। मामलों को प्रवेश के लिए रखा जाता है ताकि अदालत को विवाद पर विचार करने और यह जांचने के लिए मौका मिले कि क्या उच्चतर अदालत द्वारा पुनर्विचारण की आवश्यकता है जो आदेश पर सवाल उठाया गया है। आमतौर पर इसे पक्षकार अपीलार्थी को सुनने के बाद किया जाता है। इस स्तर पर यह स्पष्ट है कि कोर्ट चाहे तो याची अपीलार्थी के विरुद्ध पारित निष्कर्ष को अभिनिर्णित करे और आलौच्य आदेश को पुष्ट कर दे। अपील के प्रवेश की स्टेज पर ऐसा अभिनिर्णय अपीलीय न्यायालय के क्षेत्राधिकार का हिस्सा है तथा हमें संदेह है हमें संदेह है कि यदि यह अधिकार विधि द्वारा स्पष्ट रूप से प्रदान किया गया है, तो क्या वह प्रक्रिया के नियम बनाकर प्रभावित हो सकता है। अदालत के समक्ष प्रवेश के लिए मामले रखना केवल प्रक्रिया के मामले नहीं है, बल्कि अपीलीय अदालत द्वारा न्यायिक अधिकार का प्रयोग करने का भी प्रश्न है। सामान्यतः अगर अधिकार किसी

अधिनियम द्वारा प्रदान किया जाता है, तो हम इसे सीमित करने वाले किसी भी प्रक्रियात्मक नियम द्वारा इसकी प्रभावकारिता को कम करने के लिए अनिच्छुक होंगे, जिससे अपीलीय अदालत को उसकी शक्ति से महरूमी हो, अपील की सुनवाई सुनने और अपील की मेरिट्स को प्रमाणित करके इस बारे में अवगत कराने के द्वारा कि क्या वह उसे अधिक सोच-समझ की आवश्यकता है।

"प्रवेश" में शामिल इस सभी प्रक्रिया का स्पष्ट न्यायिक प्रभाव और मान्यता है। यह उच्चतर अदालतों में पेश किए गए मामलों को त्वरित और निश्चित निस्तारण हेतु गतिकी की सेवा करता है। राजस्व संहिता विशेष रूप से विधान की धारा XLI, नियम 11, सी०पी० कोड जैसी व्यवस्था द्वारा प्रवेश चरण में अपील को खारिज करने की अनुमति देती है। ऐसी व्यवस्था के बिना भी, हम सोचते हैं कि यह अपीलीय अधिकरण में स्वाभाविक रूप से समाहित होगा जिससे वह अपील को खारिज कर सकती है जो कि प्राथमिक रूप से कोई मान्यता नहीं रखती हो या अस्थायीता, सीमितता या अयोग्यता की दोषों से पीड़ित हो सकती है। इस चरण को, जिसे एक अपील के प्रवेश चरण के रूप में देखा जाता है, प्रतिबंधों को नुकसान और

सार्वजनिक और निजी समय की बचत करने में सहायक होता है। यह बेमर्जी और कष्टदाई विवादों की जांच कर सकता है। इन सभी विचारों को ध्यान में रखना चाहिए जबकि अधिनियम द्वारा प्रदान की गई अपील के रूप की विचारधारा को विचार किया जाता है। धारा 483 के विधान और उसके अनुशासन को एक अपवाद के रूप में और उस अपील के प्रवेश चरण में स्थित इन सभी न्यायिक और युक्तिसंगत विचारों को मिटा दिया जा सकता है। हम अच्छी तरह से देख सकते हैं कि कंपनी के मामलों में अपील के प्रवेश चरण न तो अतिरिक्त है और न ही अनावश्यक। वास्तव में, इसमें अपीलीय अधिकार का गंभीर प्रयास स्थिर होता है जो न्यायिक परिणामों से भरपूर होता है। यदि उस चरण को स्पष्ट रूप से छोड़ने वाली कोई चीज नहीं है, तो यह न तो न्यायसंगत है और न ही उचित होगा कि धारा 483 के तहत कोई सुनवाई प्रवेश चरण में हो सके। हमने पहले ही इसकी संकेत किया है कि जो मामला गोलचा कंपनी का एआईआर 1970 एससी 1350 (उपरोक्त) में देखा गया था, वह इस न्यायालय के नियम से संदर्भित था और कुछ अधिक नहीं था। उस टिप्पणी को और भी तनावपूर्ण या तार्किक रूप से विस्तृत करना असम्भव है कि धारा 483

के तहत अपीलीय अदालत को प्रवेश चरण में अपील की मेरिट की जांच करने की शक्ति नहीं होती है या वह इसे खारिज करने में अक्षम हो जाती है, हालांकि यह निरर्थक हो सकती है। यह स्पष्ट है कि किसी निर्णय के अनुपात से संभावित तार्किक विस्तार स्वयं निर्णय का हिस्सा नहीं होते हैं और इस तरह के पूर्ववत परिपेक्ष्य लगाना जोखिमपूर्ण होता है।"

हम कानून के इस कथन से सहमत हैं।

किरणमाल जुमेरलाल बोराना मारवाड़ी बनाम ज्ञानोबा बाजीराव खोट और अन्य, (1983) 4 एस.सी.सी. 223, इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय की उस प्रथा को स्वीकार नहीं किया है जिसमें अपील में कानून और तथ्यों दोनों के कई और गंभीर प्रश्न उठाए जाने पर एक शब्द के आदेश 'खारिज' द्वारा अपील को खारिज कर दिया गया है।

इससे स्पष्ट है कि अपीलेट कोर्ट, जिसमें उच्च न्यायालय भी शामिल है, अपील को संक्षेप से खारिज करने की शक्ति रखते हैं। ऐसी शक्ति अपीलीय क्षेत्राधिकार में निहित है। संक्षेप में खारिज करने की शक्ति प्रथम अपीलों के संबंध में अभ्यस्त होने के लिए उपलब्ध है शर्त यह है कि ऐसी शक्ति केवल अपेक्षागत रूप से और केवल तभी अभ्यस्त की जाएगी अगर पहली अपीलीय अदालत को यह यकीन हो कि अपील इतनी निरर्थक है कि

यह किसी भी वाद-विवादपूर्ण प्रश्न नहीं उठाती है या कानून का कोई आपत्तिजनक प्रश्न नहीं उठाती है, क्योंकि इससे प्रतिदाता के लिए समय और पैसे की पूरी बर्बादी होगी, और यह अदालत के लिए निष्फलता का अभ्यास होगा। पहली अपीलीय अदालत जो अपीलों को संक्षेप में खारिज करने की शक्ति का प्रयोग कर रही हो, उसे एक स्पष्ट आदेश देना चाहिए जिसमें यह स्पष्ट किया गया हो कि उसने उन प्रार्थनाओं की जांच की गई थी- या कानून की- जो उसके सामने रखी गई थी और उन्हें बिना किसी मूल्य या पदार्थ के पाया गया था और संक्षेप में कारण दिए गए थे। इससे उस आपत्तिजनक अपीलेंट के जो सुपीरियर अधिकार को जिसकी ओर से आवेदन किया गया है, संतुष्टि मिले कि अपील को संक्षेप से खारिज करने की शक्ति को अपीलीय अदालत ने विवेकपूर्ण रूप से और अपेक्षागत रूप में प्रयोग किया था।

श्री एस.के. जैन, प्रतिवादी के वकील ने सुप्रीम कोर्ट नियम 1966 के अनुभाग XV के नियम 5A पर बलपूर्वक भरोसा दिया है। नियम 5A में तीन प्रकार की अपीलों की सूची दी गई है जो "पंजीकृत होने पर अदालत के सामने प्राथमिक श्रवण के लिए आती हैं, और या तो उसे संक्षेप में खारिज कर देती है या नोटिस जारी करने का आदेश देती है..."। उन्होंने यह दावा किया कि नियम ने केवल कुछ श्रेणियों की अपीलों को प्राथमिक श्रवण के लिए अदालत के सामने लाने की विशेष प्रावधान किया है और उस सूची में धारा 116A के तहत की अपील का नाम नहीं है, और इसलिए,



M/s. गोलचा इन्वेस्टमेंट्स (पी) लिमिटेड केस (उपरोक्त) के लागू होने की पूरी तरह से आपत्ति हो रही है जिसमें कहा गया है कि अन्य अपीलों को भर्ती के लिए निर्दिष्ट नहीं किया जा सकता है। हमारी राय में, यह दावा एक भ्रांति से पीड़ित है। श्री जैन द्वारा उपरोक्त नियम 5A पर आधारित किया गया जो इस संदर्भ में लागू नहीं होता है क्योंकि यह नियम नियमों के अनुभाग XV के भाग II में प्रमुख होता है, जिसका शीर्षक निम्नलिखित होता है:

“भाग II

अपीलीय क्षेत्राधिकार

(ए) दीवानी अपीलें

आदेश XV

उच्च न्यायालय द्वारा प्रमाण पत्र पर आवेदन”

यह नियम 5A अदालत द्वारा प्रमाण पर अपीलों के संबंध में डाला गया है जिसमें उच्च न्यायालय द्वारा प्रमाण पत्र द्वारा दायर की गई अपीलों के संबंध में बात की गई है। नियम 5A को ऐसे सभी प्रकार की साम्बिधिक अपीलों से संबंधित मानना सही नहीं है वरन विपरीत, हमें यह देखने को मिलता है कि उच्चतम न्यायालय नियमों में साम्बिधिक अपीलों से संबंधित अलग प्रावधान हैं। जैसे – आदेश XX-ए- मोनोपोली और प्रतिबंधक व्यापार प्रथाओं अधिनियम, 1969(1969 का 54) की धारा 55

के तहत अपील, आदेश XX- बी – कस्टम्स अधिनियम, 1962 (1962 का 52) की धारा 130-ई के खंड (बी) के तहत और केंद्रीय उत्पाद और साल्ट अधिनियम, 1944 (1944 का 1) की धारा 35-L के तहत अपील, आदेश XX-सी- धारा 14 टेररिस्ट एफेक्टेड एरियाज (स्पेशल कोर्ट्स) अधिनियम, 1984 के तहत अपील, आदेश XX-डी- धारा 16 आतंकवादी और व्याधिकात्मक गतिविधियों (रोकथाम) अधिनियम, 1985 के के तहत अपील, आदेश XX-ई- धारा 17 आतंकवादी और व्याधिकात्मक गतिविधियों (रोकथाम) अधिनियम, 1987 के तहत अपील और आदेश XX-एफ- धारा 23 उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 (1986 का 68) के अनुच्छेद 23 के तहत अपील। इसमें स्पष्ट है कि आदेश XX-A, XX-B और XX-F द्वारा संबंधित अपीलों को दाखिल कराने पर उन्हें एक पक्षीय सुनवाई के लिए अदालत के सामने रखा जाना चाहिए, जिसके बाद अपील को संक्षेप में खारिज किया जा सकता है। वैसा ही मामला विशेष छूट याचिकाओं का है जिनमें आपराधिक प्रक्रिया और आपराधिक अपीलों में भी होता है। अध्याय XX-C, XX-D और XX-E में एक विशेष प्रावधान होता है कि जैसे ही अपील का याचिका पंजीकृत और संख्यांकित पाया जाता है, उसके बाद रजिस्ट्री स्वयं ही प्रतिदाताओं को अपील के पंजीकरण की सूचना देगी। यदि केवल नियम अधिनियम की धारा 116A के तहत अपील की सुनवाई के नियमों को निर्धारित करने के लिए तैयार किए गए होते, तो न्यायालय ने या तो रजिस्ट्री को बिना सुनवाई के प्रतिदाताओं को अपील के पंजीकरण

की सूचना जारी करने के लिए विशेष प्रावधान किया होता या फिर यह निर्धारित किया होता कि अपील को प्राथमिक श्रवण के लिए रखा जाए। M/s. गोलचा इन्वेस्टमेंट्स (पी) लिमिटेड केस (उपरोक्त) में, पैरा 7 में शामिल आलोचनाएं उस सिद्धांत पर आधारित हैं जो इस न्यायालय ने बॉम्बे उच्च न्यायालय नियमों को पढ़कर निकाला है कि अपीलों को अदालत में प्राथमिक श्रवण के लिए रखा जाए, बाकी सभी अपीलों को नहीं रखा जाए। इसलिए, अपीलार्थी के लिए विद्वान वकील द्वारा की गई प्रस्तुति में कोई योग्यता नहीं है।

इसके बाद यह तर्क दिया गया कि सुप्रीम कोर्ट नियम के आदेश XXI के नियम 15(1)(सी) और यहाँ तक कि दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 384 की वैधता पर सीता राम और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, [1979] 2 एससीसी 656 में विचार किया गया था। न्यायालय ने विवादित प्रावधानों की संवैधानिक वैधता को बरकरार रखा और कहा कि यह अभिनिर्धारित करना उचित था कि इससे पहले आदेश XXI के नियम 15 (1) (सी) के तहत अपील की सुनवाई करते हुए, आम तौर पर रिकॉर्ड भेजे जाते हैं। यहाँ भी स्पष्ट है कि अदालत दण्डीय अपीलों से निपट रही थी और उस संदर्भ में यह उल्लेख किया गया था कि एकल अपील का अधिकार जीवन और आज़ादी की गारंटी में एक या अधिक ऐसी मांग है जो संविधान में मूल रूप से जड़ी है कि मनुष्य अपरिपूर्ण है और ऐसे मामलों में, एक अपील की पूरी तरह से तैयार होने वाली सुनवाई मौलिक

न्यायिक न्यायिता या प्रक्रिया का एक अभिन्न हिस्सा था। इसलिए, अदालत ने यह निर्णय दिया कि (i) उपरोक्त नियम 15(1)(सी) के तहत सामान्यतः रिकॉर्ड भेजे जाते हैं और उपलब्ध होते हैं; (ii) सामान्य मामलों में, अदालत को विरोधी पक्ष को नोटिस जारी करना चाहिए और दोनों की मौजूदगी में और हाथ में रिकॉर्ड के साथ सुनवाई का आयोजन करना चाहिए; (iii) अंतिम आदेश में कारण दर्ज किए जाएं। हालांकि, अदालत ने भी यह निर्णय दिया है कि प्रत्येक अपील का अधिकार साथ ही साथ रिकॉर्ड प्राप्त करने, दोनों पक्षों की सुनवाई करने और निर्णय के लिए पूर्ण कारणों की प्रदान करने का हक नहीं देता है। कुछ उदाहरणात्मक मामले जिनमें एक्स-पार्टे सारांश प्रक्रिया अभी भी लागू होगी, वे हैं: "जहां उक्त मामले में विवाद का केवल एक विधिक मुद्दा है और उसे इस न्यायालय की एक फैसले से पूरी तरह से कवर किया गया है, ऐसी स्थिति में अपील को और लंबे समय तक टिकाऊ करना व्यर्थ है। जहां अभियुक्त ने हत्या का गुनाह स्वीकार किया है और सबूतों के आधार पर उचित प्रमाणित किया गया है, ऐसे मामले में केवल दया की बात पर एक अपील बेकारी का कार्य है। जहां एक छोटी सी प्रक्रियात्मक अनुशासन अनुरूपता, स्पष्ट रूप से दण्ड संहिता में सुधार्य है, ऐसे मामले में अपील की पूरी सुनवाई एक अतिरिक्त कार्य है। जहां मामले, उनकी सार्वजनिक अहमियत को देखते हुए, बेतुकी, तंत्रिक, द्वेषपूर्ण, पूरी तरह से विलंबपूर्ण या खुले झूठे होते हैं, ऐसी स्थिति में अपील की दीर्घता अदालत की प्रक्रिया के दुरुपयोग की प्रोत्साहना है।"

जस्टिस कृष्णा अय्यर, जो न्यायालय के लिए बोल रहे थे, ने कहा कि पिछली सूची पूरी नहीं थी। "शायद और मामले की कल्पना की जा सकती है", लेकिन उदाहरणों ने केवल "आदेश XXI, नियम 15(1)(सी)" की "कार्यात्मक प्रासंगिकता" को दर्शाया था। एक अधिकार के रूप में और छोड़ के द्वारा एक अपील के बीच भिन्नीकरण इस प्रकार से सूत्रित किया गया था: पहले मामले में, नियम है- "नोटिस, रिकॉर्ड और कारण" लेकिन छूट है (और यह छूट है) "प्रारम्भिक सुनवाई जिसमें अपीलेंट द्वारा प्रस्तुत की गई सभी ऐसी सामग्री और खंडों के संक्षिप्त कारणों का निर्णय किया जाता है।" यह अप्रत्याशित श्रेणी उस स्थिति में होती है जहां विवेक के अनुसार, बिल्कुल कोई बिंदु नहीं है। वास्तविक संदेह के मामलों में, संदेह का लाभ अपीलेंट को जाता है और नोटिस प्रतिद्वंद्वी को जाता है- यदि भले ही अपील की अनुमति की संभावनाएँ उज्ज्वल न हों (पैरा 55)। इस न्यायालय ने नियमों में प्रारंभिक सुनवाई के लिए सूची बनाने की आवश्यकता को दूर करने वाले एक प्रावधान को "सक्षम बनाता है, बाधा नहीं। यह कुछ स्थितियों में कार्य करता है, हर अपील में नहीं। यह केवल उस स्थिति में एक चमकदार मामले को संक्षेप में खारिज करने की अदालत की आवश्यकता को हटा देता है जहां उसकी बलपूर्वक जारी रहने, प्रतिद्वंद्वी को खींचते, विस्तृत रिकॉर्ड्स को बुलाते और निर्णय की वजहों पर विस्तार करने का आवश्यकता है, अदालत के काम को रोक देगी (जो सामाजिक न्याय के लिए संस्थागत चोट है) जिसमें किसी को भी लाभ

नहीं होगा, इसमें अपीलेंट को जीवित उलझन में रखना अधिकार है।" (पैरा 49)। छूट से अपील के मामले में, अदालत का विवेकपूर्ण व्यक्तिगत विवेक कार्य में आता है।

यह कहना पर्याप्त है कि सीताराम एवं अन्य का मामला स्वयं अपीलकर्ता के विद्वान वकील श्री एस.के. जैन द्वारा किए गए निवेदन को उसके सभी बल और शक्ति से विहीन कर देता है।

पहली अपील को संक्षेप में खारिज करने की शक्ति, यदि अपील अधिकारीय है और अधिकार के रूप में दाखिल की गई हो, तो इसे इस अदालत में आवश्यकता की एक अंतर्निहित शक्ति माना जाना चाहिए। संविधान बेंच की इस मामले में यह निर्णय, संघ भारत और रघुवीर सिंह (मृत) द्वारा एलआर आदि (1989) 2 SCC 754, बहुत शिक्षा प्रद है। मुख्य न्यायाधीश आर.एस. पाठक जो अदालत के लिए बोल रहे थे, ने भारतीय सर्वोच्च न्यायालय की ध्यान मांगने वाली काम की भारी मात्रा को नोट किया, जिसने यह आवश्यक बनाया कि न्यायालय को सामान्य अभ्यास और सुविधा के लिए संविधान के निर्णयों में निश्चितता और संरेखण को बढ़ावा देने के हित में पूरे न्यायालय की बजाय विभागों में बैठना आवश्यक काम की मात्रा धीरे-धीरे बढ़ती गई है। यह इस अदालत की न्याय-केंद्रित दृष्टिकोण है, जिसे परंपरा और रिवाज द्वारा विकसित किया गया है और 'हम, भारत के नागरिक' की उम्मीदों को पूरा करने की तमन्ना में, कभी-

कभी अपने अधिकार का प्रयोग किया है ताकि न्याय को पुनः स्थापित किया जा सके, यहाँ तक कि व्यक्तिगत मामलों में भी, जबकि संविधान निर्माताओं द्वारा इसे केवल संवैधानिक मुद्दों के समाधान पर ध्यान केंद्रित करने वाला एक संघीय न्यायालय के रूप में उम्मीद की गई थी। इसके परिणामस्वरूप, इसे मामलों के बकाये में जोड़ दिया गया है, अपरिहार्य तत्व होने के बावजूद, जबकि यह मामले तय करने के लिए बिना थके काम कर रहा है, और सावधानीपूर्वक दो अतिपंथी बिंदुओं, अर्थात् 'न्याय में देरी' और 'जल्दबाजी में न्याय' से बचते हुए। कई बार, अदालत को मामलों को समर्थन करने और इसके बजाय उसके सामने पेंडिंग डॉकेटों को जोड़ने में बहुत उदार माना गया है। इसलिए, और भी अधिक आवश्यक है कि निरर्थक मामलों को प्रवेश बिंदु पर ही नियंत्रित किया जाना चाहिए, जो पूरी तरह से किसी भी मान्यता से रहित हो। मुकदमा एक महंगा प्रसंग है। यदि एक अपील में, जहां प्रतिद्वंद्वी की अनुपस्थिति में भी, अपीलकर्ता न्यायालय को प्रणयन करता है कि मामले में कोई विवादास्पद प्रश्न, या तो तथ्यों का या कानून का, शामिल है, तो हमें समझ नहीं आता कि अपीलकर्ता अभी भी यह दावा कैसे कर सकता है कि प्रतिउत्तरी को इस अदालत के सामने आने की सूचना दी जाए और पैसे, समय और ऊर्जा के खर्च करें और पेंडिंग मामलों की संख्या में जोड़ने में सहायक हों- जो प्रतिउत्तरी की उपस्थिति में, सीधे ही खारिज किए जाने की पूरी गारंटी होगी।

सुरिंदर सिंह बनाम हरदिआल सिंह और अन्य (1985) 1 SCC 91 के मामले में, इस कोर्ट द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि अधिनियम की धारा 116A सपठित धारा 116C में प्रस्तुत एक अपील को, एक सिविल अपील के रूप में देखा जाना चाहिए, और क्षेत्राधिकार जिसका प्रयोग किया जाना है, वह उतना ही व्यापक है जितना कि वह उच्च न्यायालय की मूल सिविल क्षेत्राधिकार । इस न्यायालय के समक्ष पेश की गई अपील में, चाहे वह किसी भी अधिनियम द्वारा अपील का अधिकार प्रदान करने के तहत हो या संविधान की धारा 136 के तहत छूट प्रदान की गई हो, न्यायालय की सामान्य नागरिक अपील क्षेत्राधिकार की यही होगी। इन टिप्पणियों को इस संदर्भ में किया गया था कि यह न्यायालय सामान्यतः साक्ष्यों के मूल्यांकन के आधार पर निकाले गए निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं करेगा। सामान्यतः, प्रमाणों की मूल्यांकन करते समय एक परिणाम प्राप्त किया जाता है, विशेषकर जब वह मौखिक हो, तो उसमें हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा; हालांकि, अगर अदालत के गलत दृष्टिकोण या न्याय के साथ अन्याय होने की संतुष्टि होती है, तो इस कोर्ट के पास सिर्फ शक्ति ही नहीं, बल्कि इसका दायित्व होगा, कि गलती को सुधारें और न्याय दिलाए।

इसलिए, हम स्पष्ट रूप से मानते हैं कि हालांकि अधिनियम की धारा 116A के तहत एक अपील को अधिकार के रूप में प्राथमिकता दी गई है, फिर भी इस न्यायालय को अपील के प्रवेश की स्टेज पर संक्षेप में खारिज करने की अंतर्निहित शक्ति को छीना नहीं गया है । हम यह भी कहना



चाहते हैं कि ऐसी शक्ति केवल अपवाद के रूप में ही प्रयोग की जाएगी, जैसे, जब इस न्यायालय को यकीन होता है कि अपील किसी ऐसे विधि या तथ्य के प्रश्न को उठाने वाली नहीं है, जो इस न्यायालय को सुनने से पहले उत्तरदाता को सूचित करने हेतु प्रेरित करे।

अपील करने वाले पक्ष के वकील द्वारा जो तर्क प्रेरित किया गया था, वह खारिज किया जाता है। अब इस अपील को प्रारंभिक सुनवाई के लिए (अर्थात् प्रवेश पर सुनवाई) न्यायालय के समक्ष रखा जाए।

इसी अनुसार आदेश।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी राजेश कुमार गजरा (आर.जे.एस) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।